अध्याय - 6

समन्वित निष्कर्ष

- समन्वित निष्कर्ष -

परिवर्तन सृष्टि का नियम है। सृष्टि का स्वरूप हर पल बदलता रहता है। उसी प्रकार मानव-समाज का स्वरूप भी बदलता रहता है। यह परिवर्तन मनुष्य के आचरण, विचार और पोशाक में ही केवल नहीं होता, तो सामाजिक मूल्य, मानदण्ड और मानव-सम्बन्धों में भी दिखाई देता है। तात्पर्य परिवर्तन ही सृष्टि है, जीवन है। स्थिर होना मृत्यु है। परिवर्तन जीवन्तता, सचेतनत्व का द्योतक है। समाज बदलता है, उसकी धारणाएँ, मान्यताएँ, रीतियाँ, नीतियाँ तथा दृष्टिकोण में भी परिवर्तन दिखाई देता है।

साहित्य समाज का दर्पण है। अतः सामाजिक स्थित्यंतरों का प्रतिबिम्ब हम तत्कालीन साहित्य में पाते हैं। हिन्दी साहित्य का विकास भी समाज एवं उसकी स्थितियों के अनुरूप ही हुआ है। स्वातंत्र्योत्तर काल में सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सभी दृष्टियों से समाज में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ। इससे मानव-मूल्यों को नई अर्थवत्ता प्राप्त हुई। इसी परिवर्तन के दर्शन हम स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में करते हैं। इस परंपरा में लेखिका उषा प्रियम्वदा का स्थान अपनी मौलिकता के कारण सबसे अलग है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी-जीवन की विसंगतियों को बड़ी गहनता के साथ आत्मसात किया है। परिवर्तित सामाजिक संदर्भों, नई परिस्थितियों तथा उलझनपूर्ण मनःस्थितियों में नारी के 'मिसफिट' होने की प्रवृत्ति को उजागर किया है। साथ ही आधुनिकता और भारतीय संस्कारों के मध्य होनेवाले सूक्ष्म द्वन्द्व को उषाजी ने बड़ी सफलता से चित्रित किया है। समाज की महत्त्वपूर्ण इकाइयाँ - व्यक्ति, परिवार, स्त्री-पुरुष संबंध आदिका परिवर्तित सामाजिक मान्यताओं के संदर्भ में किया गया चित्रण प्रशंसनीय है। विशेषतः लेखिका अस्तित्ववादी, व्यक्तिवादी स्वर होते हुए भी उनकी कृतियों में एक प्रकार का आदर्शवाद दिखाई देता है, शायद इसका मूल कारण उषाजी के भारतीय संस्कार हैं।

आज भारत ही नहीं, सारा संसार मूल्यों के संकट से गुजर रहा है। पुराने मूल्य बिखर गए हैं, नए मूल्य स्थिर नहीं हो पाए हैं। इसीसे आज दुनिया में एक विचित्र प्रकार की हलचल मची हुई है। इन बदलते सामाजिक सन्दर्भों को उषा प्रियम्वदाने बड़ी सूक्ष्मता एवं गहराई से अंकित किया है। समय के परिवर्तन के साथ आज पारिवारिक जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन नज़र आ रहे हैं। परिवार के सदस्यों में घुटन के कारण महत्त्वपूर्ण मानवीय मूल्य अपनी सार्थकता खो रहे हैं। आज के परिवार में सुखी दाम्पत्य जीवन की इन्द्रधनुषी छटाने लेखिका को जहाँ प्रभावित किया है, वहीं विभिन्न कारणों से नीरस बनते दाम्पत्य जीवन ने उद्वेलित किया है। उषाजी के "पचपन खम्भे लाल दीवारें" और

"शेष-यात्रा" उपन्यासों में दाम्पत्य जीवन के चित्रण में मधु-कटु, अमृत-विष दोनों ही रूपों का चित्रण हुआ है। इसी संदर्भ में टूटते संयुक्त परिवार और एकाकी परिवार के सदस्यों की विशिष्ट भाव-भावनाओं के चित्रण से उपन्यासों की सहज स्वाभाविकता बढ़ी हैं। पारिवारिक जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग विवाह और वैवाहिक जीवन से सम्बन्धित दहेज, अनमेल विवाह, अंतर्जातीय विवाह, तलाक प्रथा, पुनर्विवाह, यौन समस्या आदि का चित्रण करते हुए वर्तमान परिस्थितियों में परिवार और सुखि दाम्पत्य जीवन का समर्थन किया है। आज की कमाऊ अविवाहितों की समस्या को उठाकर नारी के स्वतंत्र आत्मनिर्भर व्यक्तित्व को तथा उसकी अदम्य जीवन-लालसा को अभिव्यक्त किया है।

सामाजिक जीवन में अर्थ के आधार के बिना जीना मुश्किल है। उषाजी ने अपने उपन्यासों में यथास्थान आर्थिक पक्ष का चित्रण किया है। इसमें डॉ. प्रणवकुमार जैसा अस्थिर पुरूष है, जो अपने वैभव की धुन में कभी सर्जरी से पैसा कमाता है तो कभी फिल्मजगत् का सहारा लेता है। पैसा, स्त्री और शराब की धुन में भटकता प्रणव अपनी आत्मशांति खो बैठता है। उषाजी की कृतियों में अनेक युवक-युवतियाँ हैं जो रोजगार की तलाश में भटक रहे हैं। जयन्त और दिव्या जैसे उच्चशिक्षित बेरोजगार हैं, जो अपनी जीविका के लिए पेट्रेस और बावर्ची के काम करते नज़र आते हैं। सुषमा जैसी मध्यवर्गीय अविवाहिता महिलाएँ हैं, जो अब भी एक उम्र के बाद कुंठा, तनाव और मानसिक विकृति की शिकार बनी हुई हैं। बढ़ती हुई महंगाई और मध्यवर्गियों की झूठी मर्यादाओं से विवश भटनागर की रेणु और स्वाती श्यामा जैसी लड़कियाँ हैं, जो धनार्जन के लिए आत्मसम्मान और शरीर बेचती नज़र आती हैं।

उषाजी की कृतियों में अर्थ के प्रभाव का विकराल रूप दिखाई देता है, जिसमें दहेज के अभाव में छटपटाती कुमारिकाएँ हैं। इन आर्थिक पक्ष के चित्रों में नील, अक्षय जैसे अफसरों की रूपरेखाएँ हैं, बुद्धिजीवियों की बातें हैं तथा कामकाजी दीन-हीन नारियों की स्थितियाँ हैं। दिवाकर जैसे प्राध्यापक की व्यथा है। आज की भौतिकवादी सभ्यता में धन-वैभव की मृगतृष्णा के पीछे भागनेवाले बड़दा, मनीश, वॉटर मैन, प्रणव के चित्रण से अर्थ की सत्ता महत्ता स्पष्ट होती है। धनाभाव से ग्रस्त निम्नवर्गीय समाज का चित्रण इनके उपन्यासों में नहीं हो पाया है।

धर्म सामाजिक जीवन का मुख्य आधार है। सामाजिक स्थिरता के लिए धर्म आवश्यक है। धर्म ही वह मूल विशेषता है, जो मनुष्य और पशु में भेद करती है। सच्चा धर्म पवित्र आचरण और व्यवहार का नाम है। उषा प्रियम्वदा ने धर्म को पारम्परिक रूप में स्वीकार न कर जीवनानुभव, तर्क, सामायिक स्थितियों एवं परिवेश के माध्यम से नया रूप देने का प्रयास किया है। लेखिका के अनुसार वास्तविक धर्म "स्व" है, मन है। उनके विचारों में मनुष्य को धर्म-निरपेक्ष होना चाहिए। इन्हीं विचारों की अभिव्यक्ति उनके उपन्यासों में मिलती हैं। उपन्यासों में चित्रित पात्रों की नैतिकता व्यक्ति और परिस्थितियों के अनुसार बदलती है। विज्ञान ने हमारी धार्मिक मान्यताओं में अनेक प्रश्नचिन्ह लगा दिये हैं। आज का

मनुष्य स्वार्थी और आत्मजीवी होता जा रहा है। भौतिकता की चकाचौंध में मूल मानवीय वृत्तियाँ दब रही हैं। फिर भी भारतीय धर्म और संस्कृति अपने मानवधर्म के पालन में श्रेष्ठ साबित हो रही है। यहाँ का व्यक्ति शिक्षित हो या अशिक्षित अंधविश्वासों की जड़े इनमें गहरी हैं। व्यक्ति-धर्म में अटूट विश्वास प्रकट करते हुए लेखिका स्पष्ट करती है कि मानवधर्म समाज से पूरी तरह कट नहीं सकता।

दर्शन और साहित्य का अटूट सम्बन्ध है। दोनों का उद्देश्य त्रिविध ताप से मानव को शक्ति प्रदान करना है। भारतीय दर्शन की परंपरा में यहाँ के दार्शनिकों का आशावादी एवं मानवतावादी दृष्टिकोण दिखाई देता है। आधुनिक युग में पाश्चात्य विचारधाराओं ने भी भारतीय साहित्य को प्रभावित किया है, जिससे नया व्यक्तिवादी दृष्टिकोण और मानव-सम्बन्ध के हमारे जाने-पहचाने सभी संदर्भ बदल गये हैं। पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति की कुछ विकृतियाँ भी हमारे समाज में आ रही हैं। पाश्चात्य और भारतीय विचारधाराओं का समन्वय हम उषाजी के उपन्यासों में पाते हैं।

भारतीय संस्कृति की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं, इन्हीं विशेषताओं के कारण वह आज भी दुनिया में अक्षुण्ण है। फिर भी युगानुरूप उसमें परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं। धर्म और संस्कृति को आत्मसात करने की प्रवृत्ति पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक होती है, जिसका प्रत्यय हमें उषाजी के नारी चित्रण में मिलता है। प्रियम्वदा की कृतियों में चित्रित नारी स्वतंत्र विचारों की होनेपर भी वह भारतीय संस्कृति की आत्मा है। अनु, सुषमा, राधिका तथा दिव्या जैसी व्यक्तिवादी विचारधारा से प्रभावित नारियों में नितांत आधुनिकता के बावजूद भी एक आदर्शवाद दृष्टिगोचर होता है। जिन्का पालन करना वे अपना परम कर्तव्य समझती है। पुरूष वर्ग पर पाश्चात्य संस्कृति हावी हो रही है।

भारतीय संस्कृति बड़ी लचीली है, फिर भी समयानुकूल कुछ परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं। उषाजी के उपन्यासों में आदि से अंततक यह परिवर्तन दिखाई देता है। इसका प्रमुख कारण लेखिका रहती है पाश्चात्य सभ्यता में और उनपर संस्कार है भारतीय, अतः उपन्यासों में चित्रित पात्र प्रवासी भारतीय हैं। इनके चित्रण में हम देखते हैं के हिप्पी संस्कृति हमारी संस्कृति में प्रवेश कर रही है। भौतिकता के मोह में पड़कर हमारा उच्चभ्रू समाज अपनी मानसिक शांति खो बैठा है। आज पवित्रता के मापदंड बदल चुके हैं। व्यक्ति और परिस्थिति के अनुसार पाप-पुण्य की नयी मान्यताएँ समाज में रूढ़ हो रही हैं। आधुनिक शिक्षा और बढ़ते हुए सम्पर्क से खान-पान, आचार-विचार तथा वेशभूषा में प्रदर्शन की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इन बाह्य परिवर्तनों के होते हुए भी इन पात्रों की आत्मा भारतीय है। इनका जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण है तथा जीवन-पद्धति में समन्वय की भूमिका दिखाई देती है। आज भावनाओं का नापतौल किया जा रहा है, जिससे संवेदनाओं और सहानुभूतियों को भी हमारे जीवन से दूर होते दिखाया गया हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि उषा प्रियम्वदा के उपन्यासों में पहले की अपेक्षा अधिक गहराई आ रही है। इनके साहित्य में सामाजिक, पारिवारिक, धार्मिक, आर्थिक एवं दार्शनिक जीवन के बदलते संदर्भ हिन्दी साहित्य में नये आयाम प्रस्तुत कर रहें हैं। ये सारे संदर्भ प्रसंगगर्भित, सामायिक, वैविध्यपूर्ण और महत्त्वपूर्ण हैं। इनके उपन्यासों में चित्रित बदलते संदर्भ कभी केवल बाह्य तौर पर दिखाई देते हैं किन्तु अंतर्तम में वे परम्परानुकूल ही हैं।

-: सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

अ) उपजीव्य ग्रंथ -

1) पचपन खम्भे लाल दीवारें - उषा प्रियम्वदा, तृ.सं. 1976

2) रूकोगी नहीं .. राधिका? - उषा प्रियम्वदा, सं. 1967

3) शेष यात्रा - उषा प्रियम्वदा, सं. 1984

आ) संदर्भ ग्रंथ -

1) आधुनिक हिन्दी उपन्यास - संपा. भीष्म साहनी, मिश्र, निदारीया, सं. 1980

2) आठवें दशक की हिन्दी कविता में सामाजिक बोध - डॉ. नामदेव उतकर "नान्देडी" सं. 1975

3) कला और संस्कृति - वासुदेव शरण अग्रवाल, प्र.सं. 1952

4) प्रेमचंदोत्तर उपन्यासों में सामाजिक चेतना - डॉ. अमरसिंह ज.लोधा, सं. 1984

5) नव-आधुनिक हिंदी निबंध - राजेश शर्मा, सं. 1988

6) भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता - डॉ. प्रसन्नकुमार आचार्य, पूर्वाभास, संवत् 2014

7) भारत में सामाजिक परिवर्तन - कुलबीर सिंह, सं. 1976

8) मानव और संस्कृति - श्यामाचरण दुबे, प्र.सं. 1960

9) महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में वैचारिकता - डॉ. शशि जेकब, सं. 1989

10)मेरी प्रिय कहानियाँ - भूमिका - उषा प्रियम्वदा, सं. 1974

11)महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में बदलते सामाजिक संदर्भ- डॉ. शीलप्रभा वर्मा, सं. 1987

12)संस्कृति के चार अध्याय - डॉ. रामधारी सिंह "दिनकर" सं. 1966

13)समकालीन भारतीय समाज संस्थाएँ और संस्कृति - डॉ. वात्सायन, सं. 1989

14)समकालीन हिंदी कहानी और समाजवादी चेतना - डॉ. किरण बाला, सं. 1988

15)समाजशास्त्र - डॉ. कशाळीकर, प्रा. कुर्लेकर, सं. 1978

16)साहित्य और आधुनिक युगबोध - देवेन्द्र इस्सर, सं. 1973

17)"सोसायटी" - मेकाईवर तथा पेज, सं. 1958

18) स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में जीवनदर्शन – डॉ. सुमित्रा "त्यागी", प्र.सं. 1978

19) स्वातंत्र्योत्तर हिंदी काव्य: युगीन संदर्भ – डॉ. सुभद्रा पैठणकर, सं. 1988

20) स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास की समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि – डॉ. स्वर्णलता, सं. 1975

21) हिन्दी उपन्यासों में नारी – डॉ. शैल रस्तोगी, प्र.सं. 1977

22) हिंदी उपन्यास – डॉ. सुरेश सिन्हा, द्वि.सं. 1972

23) हिन्दी-उपन्यास उपलब्धियाँ – लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, सं. 1973

24) हिन्दी उपन्यास: समाजशास्त्रीय विवेचन – डॉ. चण्डीप्रसाद जोशी, प्र.सं. 1962

25) हिन्दी उपन्यास – सुषमा धवन, सं. 1962

26) हिन्दी उपन्यास साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन – डॉ. रमेशतिवारी, प्र.सं. 1972

27) हिन्दी साहित्य चरण और चेतना – डॉ. ज्ञानसिंह मान, प्र.सं. 1987

28) हिन्दी उपन्यास: प्रेम और जीवन – डॉ. शांति भारद्वाज, सं. 1969

इ) पत्र-पत्रिकाएँ –

1) आलोचना – लक्ष्मीकांत वर्मा (उपन्यास अंक)

2) कादम्बिनी – दिसंबर, सं. 1979

3) "जन ज्ञान" (मार्च-अप्रैल संयुक्त अंक) संपादक वेदभिक्षु, सं. 1979

4) जनसंख्या शिक्षा – शिक्षण शास्त्र संस्था, महाराष्ट्र राज्य, पुणे

5) धर्मयुग "नारीअंक" 18 से 24 मार्च 1990

6) रविवार सकाळ (दिवाळी अंक आक्टोबर) 1990

7) "सारिका" (प्रथम पाक्षिक) उषा प्रियम्वदा से "अवधारणा मुदगल से लम्बीबातचीत 15 जुलाई 1984

ई) कोशग्रंथ

1) भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोश – संपा. रामचंद्र पाठक, सं. 1969

–x–x–x–x–x–x